

भारतीय दर्शन में मनःशास्त्रीय अवधारणा: 'पातंजल योगसूत्र के सन्दर्भ में'

मेजर (डॉ.) बेला मलिक

संस्कृत विभाग, सेठ मथुरादास बिनानी, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा

सभी विषय और सभी विज्ञान किसी न किसी रूप में अथवा अधिक उच्च स्तर पर दर्शनशास्त्र से संबन्धित हैं। कुछ विद्वानों ने तो इस बात पर भी तर्क दिया है कि सभी विज्ञानों और विषयों की उत्पत्ति दर्शनशास्त्र से होती है। यदि किसी भी विषय अथवा विज्ञान के इतिहास को देखा जाए तो यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक विषय अथवा विज्ञान का प्रारम्भ ग्रीक काल के दर्शनशास्त्रियों के विचारों से ही हुआ है। मनोविज्ञान के साथ थोड़ी सी नई बात यह है कि मनोविज्ञान का प्रारम्भ में अध्ययन दर्शनशास्त्र में ही किया जाता था। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक मनोविज्ञान को दर्शनशास्त्र की एक शाखा के रूप में माना जा रहा था। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक मनोविज्ञान को केवल थोड़े से विश्वविद्यालयों में ही स्वतंत्र विषय के रूप में मान्यता मिल पायी थी।

भारतवर्ष में तो मनोविज्ञान का अध्ययन प्रारम्भ से ही दर्शनशास्त्र के अन्तर्गत किया जाता था। विभिन्न विश्वविद्यालयों के मनोविज्ञान सम्बन्धित पाठ्यक्रम दर्शनशास्त्र के पाठ्यक्रम के अंश के रूप में स्वीकार किये जाते थे। भारत में सर्वप्रथम मनोविज्ञान प्रयोगशाला की स्थापना कलकत्ता विश्वविद्यालय में सन् 1916 में डॉ. एस.एन. सेनगुप्ता ने की। वर्तमान में लगभग 49 विश्वविद्यालयों में मनोविज्ञान की शिक्षा स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर दी जा रही है। सन् 1925 में इण्डियन साइंस कांग्रेस ने मनोविज्ञान विषय को अपने वार्षिक अधिवेशन में सम्मिलित किया। Psychology शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्दों Psyche और Logos से हुई है। (Psychology = Psyche+logos) Psyche का अर्थ आत्मा से है Logos का अर्थ है-ज्ञान अथवा बातचीत करना। यदि इसका शाब्दिक अर्थ लिया जाए तो इसका तात्पर्य है, आत्मा का ज्ञान ही मनोविज्ञान है अर्थात् आत्मा का अध्ययन। कुछ विद्वानों के मतानुसार आत्मा के स्थान पर मन का शब्द प्रयोग किया जाए तो कहा जा सकता है कि मन का ज्ञान ही मनोविज्ञान है परन्तु मन के भी अनेक अर्थ हैं जैसे आत्मा, चेतना तथा मानसिक प्रतिक्रियाएँ। अतः मन का स्वरूप क्या है? इस सम्बन्ध में मनोविज्ञानियों का मतैक्य नहीं है। मनोविज्ञान की ऐसी कोई परिभाषा नहीं है जो इसकी विषय वस्तु को स्पष्ट रूप से वर्णित कर सके लेकिन अध्ययनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मनोविज्ञान में विभिन्न परिस्थितियों के प्रति प्राणी के व्यवहारों, सभी प्रकार की प्रतिक्रियाओं, समायोजन, अनुक्रियाओं और अभिव्यक्तियों आदि का अध्ययन किया जाता है। मनोविज्ञान के बीज योगसूत्रों में देखे जा सकते हैं। योगसूत्र मनोविज्ञान के विषयों की ही व्याख्या करते हैं और यह कारण है कि 'पातंजल योग' को योग मनोविज्ञान कहा जा सकता है। मनोविज्ञान मन का कमबद्ध ज्ञान है तो 'पातंजल योग' भी चित्त का विज्ञान है।

योग कोई धर्म नहीं है, योग हिन्दू नहीं है, मुसलमान नहीं है, योग तो एक विशुद्ध विज्ञान है- गणित, फिजिक्स या कैमिस्ट्री की तरह। यह तो एक विशुद्ध गणित है आन्तरिक अस्तित्व का। अतः एक मुसलमान भी योगी हो सकता है, ईसाई भी, जैन भी और बौद्ध भी योगी हो सकता है। योग तो एक शुद्ध विज्ञान है और जहाँ तक योग-विज्ञान की बात है पतंजलि इस क्षेत्र के सबसे बड़े नाम हैं, एक मनोवैज्ञानिक हैं। वे विरल पुरुष हैं, किसी अन्य की तुलना पतंजलि के साथ नहीं की जा सकती है। मनुष्य के इतिहास में धर्म को पहली बार विज्ञान की अवस्था तक लाया गया। पतंजलि ने धर्म को मात्र नियमों का विज्ञान बना दिया, जहाँ विश्वास की जरूरत नहीं है। योग किसी बात पर विश्वास करने को नहीं कहता। योग कहता है- अनुभव करो। जैसे विज्ञान कहता है, प्रयोग करो। प्रयोग और अनुभव एक ही बात है, उनकी दिशाएं अलग-अलग हैं। प्रयोग का अर्थ है कि व्यक्ति कुछ बाहर की ओर कर रहा है और अनुभव का अर्थ है कि व्यक्ति अपने अंदर की ओर कुछ कर रहा है। अनुभव है-एक आन्तरिक प्रयोग।

योग अनुशासन है, साधना है। स्वयं को रूपान्तरित करने का प्रयास है। योग चिकित्सा विज्ञान भी नहीं है जैसा कि मनोवैज्ञानिक समझते हैं कि योग भी चिकित्सा विज्ञान है परन्तु ऐसा नहीं है। चिकित्सा की आवश्यकता रोग ग्रस्त होने पर पड़ती है लेकिन अनुशासन की आवश्यकता तो स्वस्थ होने पर भी है। वास्तव में अनुशासन तो सहायक ही तभी होता है जब व्यक्ति स्वस्थ हो। योग किसी भी रूप में यह कोशिश नहीं करता है कि समाज के साथ व्यक्ति का सामंजस्य किया जाए। यदि समन्वय या सामन्जस्य की भाषा में योग की व्याख्या की जाए तो योग समन्वय है अस्तित्व के साथ, दिव्य सत्ता के साथ। जब व्यक्ति का मन पूरी तरह समझ लेता है कि जो कुछ अब तक वह कर रहा था वह बिल्कुल निरर्थक था। जो भी था वह बुरे से बुरा या अच्छे से अच्छा स्वप्न था, तब अनुशासन का मार्ग खुल जाता है। 'अथ योगानुशासनम्' में अथ शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है। योग की मूलभूत परिभाषा है- 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' योग है मन की समाप्ति। योग को अनेक ढंग से परिभाषित किया गया है। कुछ लोगों का मानना है कि योग दिव्य सत्ता के साथ मन का मिलना है इसलिये इसे योग कहा जाता है। योग का अर्थ है मिलना, दो का जुड़ना लेकिन पतंजलि की परिभाषा सबसे ज्यादा वैज्ञानिक है और वे कहते हैं कि योग मन का अवसान है, समाप्ति है। योग अ-

मन होने की अवस्था है। मन शब्द अपने में समेटता है अंहकार, इच्छाएं, आशाएं तत्त्व ज्ञान, धर्म, शास्त्र आदि। ये सब मन के अन्तर्गत हैं। जो कुछ भी हम सोचते हैं वह मन है। मन एक क्रिया है लेकिन इस शब्द 'मन' की वजह से प्रतीत होता है कि भीतर कोई ठोस वस्तु है लेकिन मन का मतलब है, सोचना। यह एक सक्रियता है जब मन सक्रिय न हो तब व्यक्ति योग में हो सकता है। जब मन मौजूद हो तो व्यक्ति योग में नहीं हो सकता है। चाहे कितनी ही मुद्राएं बनायी जाएं या कितने ही आसन लगाये जाएं लेकिन यदि मन कार्य करता रहे, व्यक्ति सोचता रहे तो योग में नहीं उतर सकता है। जब मन का होना समाप्त हो जाता है, साक्षी स्वयं में स्थापित हो जाता है।

मन शरीर से भिन्न कोई वस्तु नहीं है, मन शरीर का ही हिस्सा है। यह शरीर ही है, लेकिन गहरे रूप से सूक्ष्म जो शरीर की एक अवस्था है, बड़ी नाजुक और बड़ी परिष्कृत। मन और शरीर दो नहीं है, यह पतंजलि की सबसे गहरी खोजों में से एक है। आधुनिक विज्ञान भी इसे मान्यता देता है। पश्चिम में यह ज्ञान बिल्कुल नया है और वे कहते हैं कि शरीर और मन के विभाजन की बात करना ठीक नहीं है। यह साइकोसोमैटिक है, यह मनः शारीरिक है, यह दोनों शब्द एक घटना के दो कार्य मात्र हैं। एक छोर मन है तो दूसरा छोर शरीर है। अतः एक को बदलने के लिए दूसरे पर कार्य किया जा सकता है। शरीर के पास क्रिया के पाँच अवयव हैं- पाँच इंद्रिया, क्रिया के पाँच उपकरण है। मन की पाँच वृत्तियाँ हैं, क्रिया के पाँच रूप- "वृत्तयः पंचतयः क्लिष्टाक्लिष्टाः"।

मन की ये क्रियाएं क्लेश का स्रोत भी हो सकती हैं और अक्लेश का भी। मन की ये पाँच वृत्तियाँ - प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, स्मृति गहरी वेदना में पहुँचा सकती हैं, दुःख में, पीडा में भी। यदि मन की क्रियात्मकता का उपयोग सही ढंग से करते हैं तो वे गैर-दुःख में भी ले जा सकती हैं। पतंजलि ये नहीं कहते हैं कि मन आनन्द में ले जाएगा या परमानन्द में ले जाएगा अपितु ठीक ढंग से उपयोग करने पर यह मन हमें गैर-दुःख में ले जा सकता है आनन्द में नहीं क्योंकि आनन्द तो व्यक्ति का स्वभाव ही है, मन उस तक नहीं ले जा सकता। यदि व्यक्ति गैर-दुःख में है, तो आन्तरिक आनन्द स्वतः ही प्रवाहित होने लगता है।

पहली वृत्ति है प्रमाण अर्थात् सम्यक् ज्ञान और ध्यान इस वृत्ति तक ले जाता है। पतंजलि के अनुसार मन की एक क्षमता होती है और यदि वह क्षमता ठीक ढंग से निर्देशित की जाए तब जो कुछ भी जाना जाए, वह सत्य होता है स्वयं सिद्ध होता है लेकिन हम इसके प्रति जागरूक नहीं हैं क्योंकि हमने कभी इसका उपयोग नहीं किया है। मन का यह आयाम अप्रयुक्त रह गया है। मन की इस सम्यक् ज्ञान की प्रज्ञा की क्षमता को सही तरीके से प्रयुक्त करें तो कहीं भी इसका प्रकाश भेजे, सम्यक् ज्ञान ही उद्घाटित होगा।

मन की दूसरी वृत्ति है विपर्यय अर्थात् असत् ज्ञान। संस्कृत में असत् ज्ञान को विपर्यय कहा गया है, जो झूठा है, मिथ्या है। मन की क्षमता है- असत् ज्ञान की भी। मिथ्या ज्ञान सीप में चाँदी अर्थात् जैसा अर्थ न हो वैसा उत्पन्न हुआ ज्ञान विपर्यय कहलाता है। यथा का ज्ञान, रज्जु में सर्प का ज्ञान क्योंकि वह उसके रूप में प्रतिष्ठित नहीं होता है अर्थात् उसके असली रूप को प्रकाशित नहीं करता है। मन का एक केन्द्र है जो किसी भी वस्तु को विकृत कर सकता है। नशा उस केन्द्र को उत्तेजित कर देता है जिसे पतंजलि ने विपर्यय कहा है- मिथ्या ज्ञान या विकृति का केन्द्र। मादक पदार्थों के प्रभाव में होने पर व्यक्ति की यह क्षमता कार्य करती है। इसके ठीक विपरीत एक केन्द्र है, जिसके बारे में यदि गहराई से मौनपूर्वक ध्यान किया जाए, तो वह केन्द्र कार्य करना आरम्भ कर देता है। वही केन्द्र है प्रमाण, सम्यक् ज्ञान।

मन की तीसरी वृत्ति है विकल्प अर्थात् कल्पना शक्ति। मन के पास कल्पना करने की क्षमता है। यह अच्छा है, सुन्दर है इत्यादि सब कल्पना शक्ति के द्वारा ही उतरा है। कल्पना शक्ति का प्रयोग सही ढंग से किया जाए तो कल्याणकारी है और गलत ढंग से किया गया उपयोग व्यक्ति को नष्ट भी कर देता है। कल्पना आधारित ध्यान की विधियाँ कल्पना से आरम्भ होती हैं, धीरे-2 कल्पना सूक्ष्म और सूक्ष्मतर होती जाती है। अतः कल्पना मिट जाती है और सत्य सामने दिखाई देने लगता है। कल्पना शक्ति द्वारा असंभव भी संभव हो जाता है।

वैज्ञानिक अन्वेषणों से यह प्रमाणित हुआ है कि जो भी बात कल्पना में उतर जाती है, वह बीज बन जाती है। कई पीढ़ियों, कई राष्ट्रों को कल्पना शक्ति का प्रयोग करके बदल डाला गया है। पंजाब के हिन्दुओं को देखने पर ज्ञात होता है कि गुरु नानक ने कहा 'तुम अजेय हो' और इस पर विश्वास करके कल्पना शक्ति कार्य करने लगी और पंजाब में एक नयी प्रजाति सिख अस्तित्व में आयी जो कल्पना शक्ति का श्रेष्ठ परिणाम है। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने केवल कल्पना शक्ति का प्रयोग करके कई रोगों से छुटकारा दिलाने में लाखों लोगों की मदद की और असाध्य रोगी ठीक हो गये। यह एक बुनियादी नियम है- हमारा मन हमारी कल्पना शक्ति के पीछे चलता है।

जाग्रत तथा स्वप्नावस्था की वृत्तियों के अभाव की प्रतीति को आश्रय करने वाली चौथी वृत्ति है निद्रा। निद्रा का अर्थ है एक समग्र निर्विषय अवस्था। निद्रा अक्रिया है मन की, जब कोई चेष्टा, कोई क्रिया मन में नहीं है। यदि सपने आ रहे हो तो वह निद्रा नहीं है। मन पूरी तरह से लीन हो गया है, वह विश्राम में है तो यह निद्रा सुंदर है, जीवनदायिनी है। इसका उपयोग दो ढंग से किया जा सकता है। पहला ध्यान के रूप में दूसरा, सहज विश्राम की तरह। निद्रा का सही उपयोग कैसे करना है, यदि यह जान लिया जाए तो यह समाधि हो सकती है। समाधि और निद्रा भिन्न है। समाधि में बस जागरूक रहते हैं, दूसरी हर चीज समान रहती है।

मन की पाँचवी वृत्ति है स्मृति। अनुभव किये हुए विषय का फिर चित्त में आरोहपूर्वक उससे अधिक नहीं, किन्तु तन्मात्र विषयक ज्ञान होना स्मृति है। प्रमाण, विपर्यय, विकल्प द्वारा जाग्रत अवस्था में जिस किसी वस्तु को अनुभव करते हैं तो उस अनुभव से चित्त पर संस्कार पड़ते हैं उन संस्कारों से स्मृति होती है। स्मृति दो प्रकार की है- एक भावित स्मृत्यर्थ अर्थात् मिथ्या पदार्थ विषयक जो कि स्वप्न में होती है और एक

अभावित स्मृत्यर्थ अर्थात् यथार्थ पदार्थ को विषय करने वाली जो जाग्रत अवस्था में होती है। स्मृति के सम्यक् होने के लिए अपने प्रति समग्र रूप से सज्जा होना पड़ता है। केवल तभी स्मृति सही हो सकती है जो भी कुछ घटित हुआ है, अच्छा या बुरा, उसे परिवर्तित न किया जाए। जो जैसा है उसे वैसा ही जानने की कोशिश करनी चाहिए, भले ही यह दुष्कर हो।

पातंजल योगसूत्र की उपर्युक्त पंचचित्तवृत्तियों की भाँति मनोविज्ञान मन की विभिन्न दशाओं का अध्ययन करता है। फ्रायड ने मन को दो भागों में विभाजित किया है-

1. Topological aspect of mind 2. Dynamic aspect of Mind मन के Topological पहलू को फिर तीन भागों में बाँटा है-चेतन, अर्द्ध चेतन, मन और अचेतन। चेतना के अर्थ को स्पष्ट करते हुए फ्रायड ने लिखा है यह मन का वह भाग है जिसका सम्बन्ध तुरन्त ज्ञान से होता है। इसे प्रमाण नामक चित्तवृत्ति में देखा जा सकता है। पौगरेट्ज के अनुसार चेतना का अर्थ किसी चीज की ज्ञानात्मक उपस्थिति से है अर्थात् चेतना का अर्थ है बहुत कुछ किसी चीज के स्पष्ट ज्ञान से जो वर्तमान में व्यक्ति के सामने उपस्थित है। कुछ विद्वानों के अनुसार चेतना में संवेदना, स्मरण, कल्पना और तर्क आदि मानसिक प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं। चेतना मन का वह भाग है जो मन को अन्य भौतिक पदार्थों से अलग करता है। पूर्ण चेतना की अवस्था में मानसिक क्रियाएँ उच्च कोटि की होती हैं। चेतना मानसिक क्रियाओं का एक प्रकार से कुल जोड़ अथवा योग है।

फ्रायड के अनुसार अर्द्धचेतन मस्तिष्क का वह भाग है जिसका सम्बन्ध ऐसी विषय सामग्री से होता है। जिसे व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कभी भी याद कर सकता है। व्यक्ति जिन अनुभवों को याद करके अपने चेतन मस्तिष्क में लाता है वह अनुभव प्रायः मस्तिष्क के इसी भाग में पड़े रहते हैं। स्काउट ने अर्द्धचेतन मस्तिष्क की अनेक विशेषताओं का उल्लेख किया है। जैसे अर्द्धचेतन से सम्बन्धित अनुभव चेतना के केन्द्र की सीमा से दूर होते हैं। व्यक्ति स्मृति के आधार पर अर्द्धचेतन मन की सामग्री को चेतना के केन्द्र में ला सकता है। अर्द्ध चेतन की विषय सामग्री के सम्बन्ध में विश्वास पूर्वक निर्णय नहीं लिया जा सकता है। यह सामग्री निष्क्रिय न होकर सक्रिय होती है और चेतन मन में आने का प्रयास करती रहती है।

अचेतन मन का वह भाग है जिसमें स्थित विषय सामग्री को व्यक्ति इच्छानुसार याद करके चेतना में लाना चाहे तो भी नहीं ला सकता है। यह मन चेतन की अपेक्षा अधिक गहरा है। अचेतन मन में वह विचार, इच्छाएँ और संवेग होते हैं जो दमित हो जाते हैं। दुःखात्मक और चिन्ता उत्पन्न करने वाले विषय चेतन मन में दमित हो कर अचेतन मस्तिष्क में चले जाते हैं। फ्रायड ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि इस मन की विषय सामग्री मानसिक रोगियों की ही अभिप्रेरणा को प्रभावित नहीं करती है बल्कि सामान्य व्यक्तियों की अभिप्रेरणा को भी प्रभावित करती है।

विकल्प नामक चित्तवृत्ति को मनोविज्ञान में भी 'कल्पना' के रूप में परिभाषित किया गया है कि कल्पना पूर्व प्रत्यक्षीकृत अनुभवों पर आधारित होती है और पूर्वानुभवों के निष्कर्ष स्वरूप प्राप्त सामग्री का एक नया पुनर्गठन होता है। वैज्ञानिकों, साहित्यकारों एवं कलाकारों के जीवन में जनसाधारण की अपेक्षा कल्पना का अधिक महत्व और उपयोग है। जब कल्पना मानव जीवन के हित की दिशा में होती है तो अधिक उपयोगी होती है और जब अनियन्त्रित सामाजिक मूल्यों के विपरीत होती है तो यह समाज और व्यक्ति दोनों के लिए हानिकारक होती है। कल्पना का महत्वपूर्ण योगदान है दैनिक और सामाजिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान ढूँढने में।

मनोवैज्ञानिकों ने स्मृति नामक वृत्ति को परिभाषित करते हुए कहा है कि स्मृति व्यक्ति की वह योग्यता है जिसके द्वारा वह पहले अधिगम की हुई प्रक्रियाओं (अनुभवों) से सूचना एकत्रित करता है फिर इस सूचना को विशिष्ट उत्तेजनाओं के प्रत्युत्तर में पुनरोत्पादित करता है। हिलगार्ड और एटकिन्सन के अनुसार पहले सीखी गई अनुक्रियाओं को, चिह्नों को वर्तमान समय में व्यक्त या प्रदर्शित करने का अर्थ ही स्मरण है। स्मृति एक प्रकार की मानसिक योग्यता है जिसमें विभिन्न प्रकार की मानसिक प्रक्रियाएँ होती हैं जैसे अधिगम, धारण, पुनः स्मरण और पहचानना, सीखना या अधिगम आधुनिक मनोविज्ञान का एक अति महत्वपूर्ण विषय है। हिलगार्ड और एटकिन्सन के अनुसार सीखने को अभ्यास के व्यवहार में सापेक्ष स्थायी परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। "We may define Learning as a amatively permanent change in behaviour that occurs as a result of practice"

पातंजल योगसूत्र में चित्तवृत्तियों के निरोध के लिए कहा गया है- अभ्यास वैराग्याभ्यां तन्निरोधः" अभ्यास और वैराग्य से उन वृत्तियों का निरोध होता है। उनमें से चित्त की स्थिति के विषय में यत्न करना अभ्यास है- "तत्रस्थितौयत्नोऽभ्यासः"। यम, नियम आदि योग के आठ अंगों का बार-बार अनुष्ठान रूप प्रयत्न अभ्यास का स्वरूप है और चित्तवृत्तियों का निरोध होना अभ्यास से ही सिद्ध होते हैं। पठन-पाठन, लेखन, पाक, कय-विक्रय, नृत्य, गायन आदि सभी अर्थ अभ्यास से ही सिद्ध होते हैं- "करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान" या "Practice makes a man perfect" अभ्यास के प्रभाव से अति दुसाध्य कार्य भी सिद्ध होते हैं। अतः जब मुमुक्षु चित्त की स्थिरता के लिए अभ्यास निष्ठ होता है तब वह स्थिरता भी उसको अवश्य प्राप्त हो कर चित्त वशीभूत हो जाता है क्योंकि अभ्यास करने पर कोई कार्य दुष्कर नहीं है।

मनोविज्ञान के अन्तर्गत सम्प्रज्ञात समाधि और असम्प्रज्ञात समाधि का भी विशेष उल्लेख किया गया है। व्यक्ति सोच सकता है और अपने दिन-प्रतिदिन के व्यवहार को, अपनी दृष्टि को परिवर्तित कर सकता है। पाश्चात्य सभ्यता से असन्तुष्ट पश्चिमी देशों के लोग भी मूल्यों को पुनः स्थापित करने के उद्देश्य से पूर्वी लोगों की ओर आशा भरी दृष्टि से देख रहे हैं जिसका परिणाम है कि ध्यान को अधिक से अधिक लोग आत्मसात् कर रहे हैं। असम्प्रज्ञात समाधि में आलम्बन का अभाव होता है। आलम्बन का अभाव करते-करते अभाव करने वाली वृत्तियों का

अभाव होने पर जो समाधि होती है, वह असम्प्रज्ञात है जिसे पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक Opening up meditation कहते हैं। दूसरी सम्प्रज्ञात समाधि किसी ध्येय को आलम्बन (आश्रय) बना कर की जाती है। यह आलम्बन ही बीज है।

इसलिये उसको सबीज, सालम्ब्य तथा सम्प्रज्ञात कहते हैं। हिलगार्ड व एटकिन्सटन ने अपनी पुस्तक "Introduction to Psychology" में लिखा है- Meditative practices can be carried out under various instructions, but instructions commonly fall into two main groups. First an opening up meditation, in which subject clears his mind for receiving new experiences and second, a Concentrative meditation in which the benefits are obtained through actively attending to same object, word or idea.

ध्यान / अवधान या Attention के लिए स्नाइड और ग्रास व उनके साथियों ने कहा है कि "अवधान टार्च की रोशनी की भाँति है, जिसे व्यक्ति अपने चेतन मन से अपने वातावरण में घटित होने वाली घटनाओं की ओर निर्देशित करता है अथवा मानसिक क्षेत्र में हो रही आन्तरिक घटनाओं की ओर निर्देशित करता है। इस प्रकार अवधान / ध्यान एक ऐच्छिक क्रिया है। व्यक्ति अवधान का जानबूझ कर चयन करता है। अनैच्छिक ढंग से वातावरण की घटनाओं की ओर या आन्तरिक घटनाओं की ओर स्वतः आकृष्ट हो कर बहुधा व्यक्ति का अवधान केन्द्रित हो जाता है। अवधान चंचल होता है और उसमें विचलनशीलता पायी जाती है। दूसरे शब्दों में अवधान का केन्द्र वैसे ही बदलता रहता है जैसे टार्च के प्रकाश में इधर-उधर प्रक्षेपित किया जाता है। जब व्यक्ति अवधान के विचलन को सप्रयास जानबूझ कर अवरुद्ध करके किसी उद्दीपन पर ध्यान को लगातार रखता है तो इसे ही अवधान की एकाग्रता Concentration कहते हैं।

मनोविज्ञान एक स्वस्थ मस्तिष्क के लिए नकारात्मक विचारों के शमन को स्वीकार करता है जिसे पातंजल योगसूत्र के 'वितर्क बाधने प्रतिपक्षभावनम्' इत्यादि सूत्रों में देखा जा सकता है। प्रतिपक्ष विचारों के चिन्तन से अभिप्राय है कि जैसे क्रोध आने पर शान्ति का चिन्तन करना, हिंसा का विचार उत्पन्न होने पर दया के भाव का चिन्तन करना इत्यादि।

निष्कर्षतः मनोविज्ञान के सभी क्षेत्रों (सैद्धान्तिक, व्यावहारिक एवं चिकित्सकीय मनोविज्ञान) में पातंजल योगसूत्र का गहन एवं यथार्थ चिन्तन अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ

1. Introduction to psychology - Atkinson and Hillgards.
2. The psychopathology of Everyday life, Sigmund Freud.
3. योग दर्शन, महर्षि पतञ्जलिकृत गीताप्रेस, गोरखपुर.